International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 21-09-2024, Accepted: 22-10-2024, Published: 06-11-2024
Volume 10, Issue 4, 2024, Page No. 25-27

अनुवाद संबंधी भ्रांतियां और उनके समाधान

डॉ. शगुन अग्रवाल
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
अनुवाद सम्प्रेषण है, लेकिन यह सम्प्रेषण की एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया है। अनुवाद शब्द से स्पष्ट ध्वनित होता है कि अनुवादक को मूल रचनाकार के पीछे चलना है। वह मूल रचना के विचारों, भावों एवं आशय से बंधा होता है। लेकिन मूल पाठ के लेखक के पदचिन्हों पर चलना मात्र ही उसका उद्देश्य नहीं है। आशय है–दिशा की ओर अनुगमन करना, लेखक के आशय एवं लक्ष्य के प्रति गतिशील होना। इस प्रकार अनुवादक की पहली समस्या यही है कि वह स्वतंत्र है भी और नहीं भी। उसे मूल रचना के भाव एवं अभिव्यंजन की सीमाओं में रहना है, अपनी स्वतन्त्र सृजनशील प्रतिभा का उपयोग भी उन्हीं सीमाओं के भीतर करना है। यदि कहा जाए कि अनुवाद का काम मूल लेखन से कठिनतर है तो गलत न होगा।

मूल शब्दः अनुवाद, भाषिक प्रक्रिया, विनिमय, कोड परिवर्तन, संस्कृति, भ्रांति, स्रोत पाठ, विधा, विषय, अर्थछवि, मुहावरा, लोकतंत्रीकरण

अनुवाद अपने मूल रूप में गंभीर भाषिक प्रक्रिया है। वह एक भाषा में व्यक्त विचार को दूसरी भाषा में व्यक्त करने का मानवीय सर्जनात्मक प्रयास है। विचारों के आदान–प्रदान करने या भावों के विनिमय के माध्यम के रूप में कार्यरत यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की व्यवस्था का नाम मात्र भाषा नहीं है, वह बृहद संकेतों का समुच्चय है। इस दृष्टि से भाषाई व्यवहार में प्रयुक्त किए जाने वाले चिह्न, प्रतीक, चित्र, रेखाएं, इशारा, शारीरिक भाषा, संकेत आदि भाषा के विविध रूप हैं, क्योंकि उनके माध्यम से विचारों का अंतरण संभव होता है। अनुवाद मूलतः ज्ञानात्मक कार्यकलाप है। इस जगत में मानव और पशुओं के बीच मूल अंतर यह है कि मानव का जीवन भौतिक परिस्थिति के साथ–साथ सांस्कृतिक परिस्थिति पर अवलंबित होता है। यह सांस्कृतिक परिस्थिति प्रकृति और समाज के साथ मानव के भावनात्मक–बौद्धिक धरातल पर होने वाले सतत संवाद की परिणती कही जा सकती है। भाषा इस संवाद का उदात्त रूप है। इसीलिए अनुवाद भाषिक अंतरण होने के साथ सांस्कृतिक विनिमय का रूप स्वयंमेव धारण करता है। यह विनिमय या संवाद या संचार मानव जीवन की बुनियाद है, उसकी गतिमयता का ही दूसरा रूप है। हॉकेट सही ही कहते हैं कि "मानव केवल रोटी के बल पर मात्र जिंदा नहीं रह सकता है, मानव की दूसरी आवश्यकता विचार विनियम या संचार है।"[1] इस संचार की पूर्ति अनुवाद भली–भाँति करता है।

संसार में जब बहुभाषिकता की स्थिति कायम हुई होगी, तब से अनुवाद के इतिहास का आरंभ हुआ होगा। भाषा के साथ लिपियों के विकास में भी अनुवाद का अहम हाथ है। बिंबों व प्रतीकों से रुपायित मानव के अनुभव संसार की लिपि या कोड के रूप में जब बाहरी अभिव्यक्ति संभव हो जाती है तो वहां संकेतों व प्रतीकों में अंतरण या कोड परिवर्तन संभव होता है, इसे अनुवाद ही कहा जाना चाहिए। लिपिबद्ध होकर जब मानव का ज्ञान व्यक्त होने लगा तो ज्ञान के विस्फोटात्मक प्रचार की पृष्ठभूमि तैयार हुई। इस संबंध में जीन डेलिसेले और जूडिथ वुडवर्थ का कहना है कि ज्ञान के दायरे विस्तृत करने में तथा देश राष्ट्र के आधार तैयार करने में भी अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[2] संस्कृति अपने आप में मानव की आत्मोन्नति का नाम है। मानव अपने चिंतन मनन के माध्यम से जिसका निर्माण करता है, उसी का नाम संस्कृति है। यह संस्कृति विचारजनित होने के कारण भाषा के साथ उसका नाभि–नाल संबंध है। इसलिए अनुवाद से संपन्न होने वाले भाषिक अंतरण के साथ विचारों या संस्कृति का भी अंतरण होता है। इस आलोक में अनुवाद की समृद्धि भाषिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि है। सूक्ष्म विवेचन से लगता है कि "अनुवाद के जरिए भाषा एवं संस्कृतियों का मिलन होता है तथा इसी मिलन या आदान प्रदान की प्रक्रिया से मानव की संस्कृति की सतत् प्रोन्नति होती है।"[3]

अनुवाद सम्प्रेषण है, लेकिन यह सम्प्रेषण की एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया है। अनुवाद शब्द से स्पष्ट ध्वनित होता है कि अनुवादक को मूल रचनाकार के पीछे चलना है। वह मूल रचना के विचारों, भावों एवं आशय से बंधा होता है। लेकिन मूल पाठ के लेखक के पदचिन्हों पर चलना मात्र ही उसका उद्देश्य नहीं है। आशय है–दिशा की ओर अनुगमन करना, लेखक के आशय एवं लक्ष्य के प्रति गतिशील होना। इस प्रकार अनुवादक की पहली समस्या यही है कि वह स्वतंत्र है भी और नहीं भी। उसे मूल रचना के भाव एवं अभिव्यंजन की सीमाओं में रहना है, अपनी स्वतन्त्र सृजनशील प्रतिभा का उपयोग भी उन्हीं सीमाओं के भीतर करना है। यदि कहा जाए कि अनुवाद का काम मूल लेखन से कठिनतर है तो गलत न होगा। यह कार्य दरअसल 'असि पर नाच' है। मलयालम के प्रसिद्ध कवि सच्चिदानंदन अनुवाद को विचारों या भावों के नीड़ परिवर्तन के रूप में स्वीकार करते हैं। इस अंतरण में अनुवाद को अनेक सांस्कृतिक परतों को पार करना पड़ता है। कवि के शब्दों में, जिस प्रकार मछली जलराशि में डुबकी लगाती है, उसी प्रकार भाषा एवं संस्कृति की गहराइयों में अनुवाद डूबता है। कवि का कहना है कि यहाँ अनुवादक भाषा के हर एक सैकत को, कंकड़ को सूंघता है। वास्तव में शब्दों को सूंघने का मतलब भाषा में प्रयुक्त शब्द के भीतर समाविष्ट स्वरुपगत, अर्थगत, सौदर्यपरक, ऐतिहासिक, सामाजिक आदि अनगिनत अर्थ की परतों को उद्घाटित करना होता है।[4] निश्चित ही यह कोई आसान काम नहीं है। साथ ही अनुवाद के संबंध में कुछ ऐसी भ्रांतियां हैं जिनके चलते कई बार बहुत ही सामान्य स्तर का अनुवाद सामने आता है। अनुवाद संबंधी कुछ सामान्य भ्रांतियां इस प्रकार हैं–

1. **किन्हीं दो अथवा ज़्यादा भाषाओं को जानने वाला कोई भी व्यक्ति अनुवादक बन सकता है।**
   यह एक बहुत ही आम भ्रांति है जो सबसे ज़्यादा नुकसान पहुंचाती है। क्योंकि एक अच्छा अनुवादक होने के लिए भाषाओं का ज्ञान ही काफ़ी नहीं है। अच्छा पाठक/लेखक होना भी जरूरी है। साथ ही अनुवादक को एक प्रकार से

मानवविज्ञानी (nthropologist) होने की आवश्यकता है क्योंकि भाषा की जड़ें समाज और संस्कृति में होती हैं। अतः अनुवादक के लिए यह ज़रूरी है कि वह स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की सांस्कृतिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को भली भांति जाने और समझे।

2. **अनुवादक किसी भी विषय का अनुवाद कर सकता है।**
अच्छे अनुवादक कुछ भिन्न पर प्रायः संबंधित क्षेत्रों के विशेषज्ञ होते हैं। इससे होता यह है कि इन क्षेत्रों में चल रहे current trends और बदलावों पर उनकी नज़र रहती है जो उनके काम में सहायक होती है।

3. **कंप्यूटर प्रोग्राम बेहतर अनुवाद कर सकते हैं।**
यह एक और गलतफहमी है, क्योंकि मानव भाषा विशेषज्ञ की जगह लेने वाला कोई translation programme नहीं बना है। अत्याधुनिक TP भी मानव भाषा की गहराई और अर्थछायाओं को नहीं पकड़ पाते हैं।

4. **किसी विशेषज्ञ (Professional) से अनुवाद कराना ज़रूरी नहीं है।**
भ्रष्ट अनुवाद या गलतियों से भरे हुए पाठ से पाठक का तो अपमान होता ही साथ ही उस संस्था या व्यक्ति के बारे में भी गलत राय बनती है।

5. **अनुवादक यदि अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद कर सकता है तो हिंदी से अंग्रेजी में भी कर सकता है।**
कुछ अनुवादक इसमें समर्थ होते हैं पर इनकी संख्या बहुत कम है। प्रायः अनुवादकों की एक भाषा प्रधान होती है।

6. **अनुवाद करना आसान काम है।**
अनुवादक को एक साथ स्रोत पाठ (source text) और लक्ष्य पाठ (target text) से जूझना पड़ता है। इसका मतलब हुआ एक ही समय में दो विभिन्न भाषाओं तथा संस्कृतियों को समझने की कोशिश।

इन तमाम बातों से इतना तो तय है कि अनुवाद बहुत ही जोखिम का काम है हर पल अर्थ का अनर्थ होने की संभावना बनी रहती है। इस संभावना से बचने की पहली अनिवार्य आवश्यकता है – एक विशेष प्रकार की मनोभूमि की उपलब्धि। यह मनोभूमि एकांत निर्वैयक्तिकता की होती है। अनुवादक को अपने भावोंदृअनुभावों, राग विराग, आशा आकांक्षाओं, विचारों की सीमाओं को छोड़कर कृति और कृतिकार के साथ एकात्म स्थापित करना होगा।

इसके लिए आवश्यक है कि अनुवादक अनुवाद के लिए उपयुक्त रचना का चुनाव करे। नाटक, उपन्यास, कहानी आदि साहित्य की विविध विधाओं में कौन–सी विधा अपनी सृजन श्रमता के अनुरूप है इसका उसे पहले ही निर्णय कर लेना है। कथा–साहित्य एवं निबंध दोनो साहित्य–विधाएँ हैं, किंतु दोनों का स्वरूप एवं शैली भिन्न है। उपन्यास का सुचारू सुन्दर अनुवाद करने वाला अनुवादक निबन्ध एवं नाटक के प्रति अपनी कलात्मकता को मोड़ पाएगा – इसमें संदेह है। अतः अनुवादक को अपनी रुचि, शब्द सम्पदा, भाषा पर अधिकार आदि बातों पर विचार करके ही साहित्य–विधा का चुनाव करना चाहिए।

विधा के साथ–साथ लेखक को विषय के चयन में भी बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। जिस विषय की पुस्तक का अनुवाद वह करता है उसका पर्याप्त ज्ञान और उसमें भरपूर रुचि का होना बेहद ज़रूरी है। अन्यथा उसकी समझ में मूल में निहित संकल्पनाएं तथा उसका सौंदर्य नहीं आ सकेगा जिस बात को अनुवादक समझेगा ही नहीं उसे लिखेगा क्या? मान लीजिए कि अनुवादक चिकित्सा–शास्त्र का ज्ञाता है परन्तु वह किसी काव्य–शास्त्र की पुस्तक का अनुवाद करने लगे तो वह विषय के साथ न्याय नहीं कर पाएगा।

विधा और विषय रुचि के अनुकूल होने पर ही अनुवादक मूल लेखक की भावना और अनुभूतियों का सम्मान कर सकेगा। मूल लेखक की जो अनुभूतियाँ होती हैं और जिन भाव–सोपानों से वह गुजरता है, यदि ठीक वैसी ही अनुभूतियां अनुवादक ने अपने अंतर में नहीं उतरीं और उन्हीं भाव–सोपानों से वह नहीं गुज़रा तो अनुवाद में मूल की आत्मा नहीं, केवल काया ही आती है। निश्चय ही यह कोई सरल काम नहीं हैं, परन्तु अनुवादक का दायित्व भी तो छोटा नहीं है।

एक सृजनशील लेखक से केवल अपनी ही भाषा के अच्छे ज्ञान की अपेक्षा की जाती है पर अनुवादक से कम से कम दो भाषाओं के ज्ञान की अपेक्षा की जाती है, मूल रचना की भाषा अनुवादक के लिए बोध–भाषा (Language of comprehension) हो और अनुवाद की भाषा अभिव्यक्ति भाषा। भाषा ज्ञान का होना उतना ही ज़रूरी है जितना मूल पाठ रसास्वादन की बुद्धि और संवेदनशील व्यक्तित्व का होना। प्रत्येक भाषा का अपना इतिहास, अपने संस्कार और अपनी शब्दावली, मुहावरे तथा संभावनाएं होती हैं। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में प्रकृतिगत, संरचनात्मक और ऐसी अनेक भिन्नताएं होती हैं जो अनुवादक के समक्ष चुनौती बनकर खड़ी हो जाती हैं। अतः अनुवादक के लिए दोनों भाषाओं की आंतरिक और बाह्य संरचनाओं की पूरी जानकारी होना आवश्यक है क्योंकि ऐसा होने पर ही वह मूल कथ्य के भाव को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित कर पाएगा।

अनुवाद प्रक्रिया में प्रायः अनुवादक के समक्ष स्रोत भाषा की ऐसी भाषिक संरचनाएं, व्याकरणिक व्यवस्थाएं तथा उनके ऐसे भावों, वस्तुओं एवं क्रियाओं के ध्वनि प्रतीक उपस्थित होते हैं, जिनके समतुल्य व समानार्थी लक्ष्य भाषा में उपलब्ध नहीं होते। इतना ही नहीं स्रोत भाषा की अभिव्यक्ति से जो अर्थ व्यक्त होता है वह लक्ष्य भाषा की अभिव्यक्ति से व्यक्त होने वाले अर्थ की तुलना में या तो विस्तृत (Expanded) होता है, या संकुचित (contracted) होता है, या कुछ भिन्न। इन समस्याओं से जूझने में शब्दकोष हमारे सहायक होते हैं, लेकिन एक निश्चित सीमा तक क्योंकि उनमें अधिकांश शब्दों के दूसरी भाषा में कई–कई पर्याय दिए होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि शब्दकोशों से सही शब्द चुनने के लिए भी दो भाषाओं पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए। उदाहरण के लिए लडडू शब्द को देखें। इस शब्द में एक साथ कितनी व्यंजनाएँ हैं। पहली बात तो इसका आकार। लुड्डू का नाम सुनते ही इसकी गोलाई का चित्र स्वत: सामने आ जाता है। दूसरे इसके गणेश देवता का प्रिय खाद्य होने, ब्राह्मण की कमज़ोरी होने की जो कल्पना अपने आप जाग जाती है वह अंग्रेज़ी के भला किस शब्द से आ सकती है। अंग्रेज़ तो यांत्रिक उपकरणों से बनी हुई Candy या तरह–तरह की pie खाते हैं। हाथ पर घुमा–घुमाकर बना हुआ लड्डू तो वे सोच भी नहीं सकते।

अनुवादक अपनी सीमाओं में बंधा हुआ यथासंभव स्रोतभाषा की पूर्ण अर्थछवियों को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करने का प्रयास करता है। अनुवाद में जीवंतता बनाए रखने तथा यथासंभव समतुल्य सौंदर्य की अभिव्यक्ति करने के लिए अनुवादक को लक्ष्य भाषा में नए तेवरों की तलाश करनी होती है।

इसी प्रकार अंग्रेज़ी के बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनके संबंध में भारतीय अनुवादक प्रायः संशय में पड़ जाता है कि कौन सा शब्द चुने। जैसे अंग्रेजी का brother in law हिंदी में जीजा है या देवर या जेठ, uncle चाचा, ताऊ, मामा, या फूफा, grandfather नाना है या बाबा, cousin चचेरा, फुफेरा या ममेरा भाई है कुछ पता नहीं चलता।

एक दूसरी समस्या मूलरचना के देश की सांस्कृतिक विशिष्टताओं, पौराणिक आख्यानों, ऐतिहासिक विवरणों, भौगोलिक स्थितियों तथा साहित्यिक संदर्भों को लेकर आती है। जिस सांस्कृतिक वातावरण में हम पले बढ़े नहीं, जिन पौराणिक आख्यानों को हमने कभी सुना नहीं, जो इतिहास हमारे देश की धरती पर बना नहीं, जिस देश को हमने कभी देखा नहीं उसका पूर्ण ज्ञान अनुवादक को कैसे हो? यदि ज्यों का त्यों अनुवाद कर दे तो पाठक के सामने उसका कैसा चित्र उतर सकेगा, विचार करने की बात है। यदि उनके स्थान पर कुछ भारतीय प्रसंगों की तुक बिठाने की कोशिश करता है तो अनुवाद मूल से दूर चला जाता है। ऐसे प्रसंगों को छोड़ देना अपने कर्तव्य से मुँह मोड़ना है। इसका उपाय यही है कि अनुवादक अधिकतम टिप्पणियां देता हुआ और यथा स्थान मानचित्र तथा चार्ट देता हुआ मूल के संदर्भों से ही पाठक को परिचित कराने का प्रयत्न करे।

इसके बाद प्रश्न आता है की मूल की शैली, अलंकार और मुहावरों आदि का अनुवाद किस प्रकार किया जाए। प्रत्येक साहित्य विधा की शैली भिन्न होती है फिर यह शैली भी प्रत्येक लेखक के अनुसार रूप बदलती है। मुंशी प्रेमचंद की बूढ़ी काकी अथवा सवा सेर गेहूं का किसी दूसरी भाषा में अनुवाद कर देना भर पर्याप्त नहीं है। प्रेमचंदीय भाषा शैली को अनुवाद भाषा में उतार देना होगा अन्यथा अनुवाद केवल भाव का ही हो पाएगा, शैली के रस से पाठक वंचित रह जाएगा। फिर गद्य और पद्य दोनों की अनुवाद धारा दो भिन्न पाटों से होकर बहती है। गद्य का सफल अनुवादक पद्य में भी सफल हो यह आवश्यक नहीं। उत्था करके अथवा रूपांतरित करके भी गद्य का उत्तरदायित्व कुछ सीमा तक निभ भी सकता है, किंतु कविता का अनुवाद करते समय भावात्मकता, लय एवं गति का संयम बनाए रखना कठिन कर्म है।

अलंकारों का अनुवाद भी इसी प्रकार अनुवादक को भ्रमित करता है। जहां तक अर्थालंकारों के अनुवाद का संबंध है, वहां तक तो अनुवादक उसे किसी प्रकार निभाने का प्रयत्न करता है परंतु जब शब्दालंकारों का अनुवाद आता है तो वह निरूपाय हो जाता है।

मुहावरा किसी भाषा में लक्षणा या व्यंजना द्वारा ऐसा सिद्ध वाक्य या प्रयोग होता है जिसका अर्थ प्रत्यक्ष रूप से विलक्षण होता है, जैसे लाठी खाना या गाली खाना। यहां खाना अपने सीधे अर्थ में न आकर लाक्षणिक अर्थ में आया है जिसका अर्थ है प्रहार सहना या अपमान सहना। मुहावरों और लोकोक्तियों में युगयुगांत का अनुभव बोलता है। इनके प्रयोग से भावों की अभिव्यक्ति सशक्त हो जाती है। परंतु इनका अनुवाद करना बड़ा कठिन काम है। इनके शब्द रूढ़ होते हैं इसलिए वे बहुत कुछ पारिभाषिक शब्दों के समान अपरिवर्तनीय होते हैं। एक मुहावरा है मुंह बनाना। यदि इसके स्थान पर आनन बनाना कहें तो उसका प्रभाव आनन फानन नष्ट हो जाएगा, फिर दूसरी भाषा में तो इसका अनुवाद करना और भी कठिन है। इसका उपाय यही है कि मुहावरे का अनुवाद न कर प्रति मुहावरा ही ढूंढने का प्रयास करना चाहिए।

इनके अतिरिक्त और भी कई समस्यायें अनुवादक के सामने आती हैं। वास्तव में यदि गद्य कवि की कसौटी है तो अनुवाद गद्यकार की। मौलिक चिंतन एवं विचारों की अभिव्यक्ति यदि सृजन है तो अनुवाद दूसरी भाषा में समांतर सृजन या पुनर्सृजन। वास्तव में जब हम एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते हैं तब भाषा का तो केवल परिवर्तन करते हैं, अनुवाद हम मूल भाषा में संचित एवं निहित उसके बोलने वालों की संस्कृति का ही करते हैं। अतः यह सोचना कि अनुवाद करना आसान है, या यह मशीन द्वारा संभव है या कि दो भाषाओं को जानने भर से यह काम किया जा सकता है, गलत होगा। सांस्कृतिक सूक्ष्मताओं और अभिव्यक्तियों की बारीकियों को समझ कर ही अनुवादक अनुवाद के साथ न्याय कर सकता है और इसके लिए बड़ी मेहनत, लगन और अभ्यास की आवश्यकता होती है। अनुवाद मात्र अनुकरण नहीं है, प्रतिभा सम्पन्न सृजनात्मक विलास का नतीजा है। वह अनुसृजन होते हुए भी भाषा के स्तर पर किए जाने वाला पुनः सृजन है।[5] रचनाकार जिंदगी को अपनी भाषा में सृजित करता है तो अनुवादक मूल रचना को ह्रदय एवं बुद्धि पक्ष की सहायता से दूसरी भाषा में पुनः सृजित करता है। प्रो. जी.गोपीनाथन के शब्दों में अनुवाद सेतु बंधन का काम करता है।[6] अनुवाद की अपनी राजनीति होती है। उसके आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक कारक तत्व होते हैं।[7] अनुवाद अपनी सक्रियता के माध्यम से मानव की स्वतंत्र चेतना से प्रेरित होकर लोकतांत्रिककरण की प्रक्रिया को मजबूती प्रदान करता है। हमारे जीवन में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं बचा है जहां अनुवाद की पहुंच न हुई हो।

संदर्भ सूची

1. Man does not live by bread alone; his next necessity is communication. Charles F.Hocket. A course in modern linguistics, MacMillan Company, New York, 1958, P.585
2. The translator developed writing system extended the boundaries within which knowledge could be disseminated they helped awaken the collective conciousness of ethlo-linguistic group. They participated in the emergence of national pride and they promoted communication of new ideas. Jean Delisle/Judith woodworth, Translator through history, John Benjamins Publishing company, Amsterdam, Pg 10, 2012
3. श्रीधरन एम. एम, विवर्तनवुम संस्कारपठनवुम, साहिति, पय्यन्नुर, पृ.23 2012
4. सच्चिदानंदन, तिरंजेडुत्त कवितकल, सायाहून फाउंडेशन, तिरुवनंतपुरम, पृ.61–62, 2013
5. R.S. Gupta, Literary Translation, Creative Books, New Delhi Pg. 23
6. जी. गोपीनाथन, अनुवाद सिद्धांत और प्रयोग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1990, पृ.9
7. Pion kuhiwczak & karin Littau, A companion to translation studies, Oriental Black Swan, Hyderabad, 2007, Pg137